International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN : 2581-9925, Impact Factor: 6.882, Volume 06, No. 01(I), January - March, 2024, pp. 149-152

भारतीय चित्रकला की धार्मिक और आध्यात्मिक पृष्ठभूमि एवं प्रवृत्तियाँ

डॉ. नवल किशोर जाट*

सार

हमारे सनातन धर्म के अनुसार जितने भी व्रत त्यौहार एवं धार्मिक अनुष्ठान किए जाते हैं। प्रत्येक अनुष्ठान के पीछे अंतर्निहित विशेष वैज्ञानिक ज्ञान छिपा हुआ है। साधारण अतः उपवास रखने के पीछे का उद्देश्य शारीरिक विकारों को नष्ट कर नई ऊर्जा का संचार करना है। मकर संक्रांति के दिवस पर तिल और गुड़ का सेवन करने का उद्देश्य ठंड के प्रति शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को तीव्र करना है। शिवरात्रि के पावन पर्व पर भांग का सेवन करने का तात्पर्य मानसिक एवं शारीरिक समस्याओं से ध्यान हटाकर उनके समाधान हेतु ध्यान केंद्रित करना है।

शब्दकोशः *चित्रकला, धार्मिक, आध्यात्मिक, प्रवृत्तियाँ, अर्थ, काम, मोक्ष, दर्शन, ललितकला, शिल्पकला।*

प्रस्तावना

सनातन धर्म के अनुसार निर्मित प्रतिमाओं के पीछे भी गूढ़ रहस्य छिपा हुआ है। जिस प्रकार सरस्वती की प्रतिमा मैं सरस्वती के चार हाथों का तात्पर्य चार वेदों से है जो जिनका उद्देश्य धार्मिक एवं सुव्यवस्थित जीवन जीते हुए अंत में मोक्ष प्राप्त करना। सरस्वती की सवारी हंस है तथा हंस का आहार मोती है अर्थात हमें समाज में व्याप्त बुराइयों को छोड़कर अच्छाइयों को ग्रहण करना है। आदि अंतर्निहित रहस्यों से प्रेरित होकर शिवलिंग विषय को चुना। इस शोध ग्रंथ के अन्तर्गत वैदिक साहित्य के आधार पर शिव का महत्व,भारतीय मूर्तिकला में शिव, भारत में अवस्थित प्रसिद्ध शिव मंदिर, एवं शिव के प्रतीकों का धार्मिक आधार पर विश्लेषण किया गया है। यह शोध विषय शिव दर्शन, शिव ज्ञान एवं शिवलिंग के धार्मिक एवं वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित है।

सनातन धर्म के अनुसार निर्मित प्रतिमाओं के पीछे भी गूढ़ रहस्य छिपा हुआ है। जिस प्रकार सरस्वती की प्रतिमा मैं सरस्वती के चार हाथों का तात्पर्य चार वेदों से है जो जिनका उद्देश्य धार्मिक एवं सुव्यवस्थित जीवन जीते हुए अंत में मोक्ष प्राप्त करना। सरस्वती की सवारी हंस है तथा हंस का आहार मोती है अर्थात हमें समाज में व्याप्त बुराइयों को छोड़कर अच्छाइयों को ग्रहण करना है। आदि अंतर्निहित रहस्यों से प्रेरित होकर शिवलिंग विषय को चुना। इस शोध ग्रंथ के अन्तर्गत वैदिक साहित्य के आधार पर शिव का महत्व, भारतीय मूर्तिकला में शिव, भारत में अवस्थित प्रसिद्ध शिव मंदिर, एवं शिव के प्रतीकों का धार्मिक आधार पर विश्लेषण किया गया है। यह शोध विषय शिव दर्शन, शिव ज्ञान एवं शिवलिंग के धार्मिक एवं वैज्ञानिक सिद्धांतों पर आधारित है।

सनातन का अर्थ 'शाश्वत' या हमेशा रहने वाला है। सनातन अर्थात जो हमेशा से है, जो हमेशा रहेगा, जिसका अंत नही है तथा जिसका कोई आरम्भ नहीं है वही सनातन है। सनातन धर्म विश्व के सभी धर्मों में सबसे प्राचीन धर्म है। परम्परागत वैदिक धर्म जिसमें उस परम शक्ति को साकार और निराकार दोनो स्वरुपों में पूजा जाता है। ये वेदों पर आधारित धर्म है, जो अपने अन्दर विविध उपासना पद्धतियों, मत, सम्प्रदाय, और दर्शन

* सहायक आचार्य (चित्रकला विभाग), राजकीय कन्या महाविद्यालय, उच्चैन, भरतपुर, राजस्थान।

समेटे हुए है। अनयायियों की संख्या के आधार पर ये विश्व का तीसरा सबसे बड़ा धर्म है तथा संख्या के आधार पर इसके ज्यादातर उपासक भारत में है। इसमें कई देव, देवताओं की पूजा की जाती है परन्तु वास्तव में यह एकेश्वरवादी धर्म है। ये धर्म अपने आप में इतना विशाल है कि इसमें से समय–समय पर विविध धर्म निकलते रहे, कुछ पुरानी परम्पराऐं टूटती रहीं तथा कुछ नई जुड़ती रहीं, कुछ पुरानी मान्यताएँ ज्यों की त्यों रहीं तो कुछ मान्यताएँ का समावेश होता रहा। विश्व में केवल हिन्दू धर्म ही ज्ञान पर आधारित है, और किसी से उसकी तुलना नहीं की जा सकती है, एक मात्र हिन्दू धर्म ही ऐसा धर्म है, जो समय–समय पर अपने नियमों की समीक्षा करके उनमें परिवर्तन एवं सुधार करता रहा है। हिन्दू धर्म एक विकसित धर्म है जो विचार से नहीं अपितु विवेक से विकसित हुआ है।

भारतीय चित्रकला की आध्यात्मिक पृष्ठभूमि

रसिक की अभिरूचि उसका उचित मानसिक विकास, बौद्धिक क्षमता और सौन्दर्य के अवगाहन और हृदयमता करने कि लिये आवश्यक है। संस्कृति, शिक्षा, धार्मिक और नैतिक विकास तथा निष्ठाएं, सामाजिक विकास का स्तर, यहां तक कि राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था–इन सब का प्रभाव रसिक में अभिरूचि उत्पन्न करने में हाथ रखता है। रसिक का मन इतिहास की दृष्टि है। सौन्दर्य के प्रति शैशव – काल से ही मानव में स्वभाविक आकर्षण प्रतिपल दृष्टिगत होता है। नन्हा स शिुशु जब पालने में पड़ा हुआ किसी रंग–बिरंगी वस्तु की ओर दृष्टि से देखता रहता है तब हमें उसमें निहित सौन्दर्य के प्रति शिशु के इस आकर्षण के अस्तित्व का आभास होता है। रंगो की दिव्यता और रूप के आकर्षण की समन्वयात्मक अभिव्यंजना कला में होती है। स्पर्श, गन्ध, रस आदि मौलिक प्रवृत्तियों के समान ही मानव में सौन्दर्य के प्रति भी चेतना विद्यमान रहती है। इसके साक्षात्कार से उसमे आनन्द की उत्पत्ति होती है और इसका अभाव उसको जीवन की नीरस और प्राणहीन बना देता है। सौन्दर्य के प्रति मानव हृदय में आकर्षण का आभास ही प्रतिफल किया जा सकता है, किन्तु उसे मापा नहीं जा सकता। स्पष्टतः यह अनन्त और असीमित है।

भारतीय चित्रकला और अर्थ, काम और मोक्ष का दर्शन

प्राची दिक् कला दक्षिणा दिक् उदीची दिक् कला एष सौम्य चतुष्फलः पादो ब्राह्मणः प्रकाशवान्नाम स य एतमेवं विद्वांश्चतुष्फलं पादं ब्राह्मणः प्रकाशवानित्युपास्ते प्रकाशवानस्मिन् लोके भवित प्रकाशवतो ह लोकांजयति य एतमेवं विद्वांश्चतुष्फल पादं ब्राह्मण+प्रकाशवानित्युपास्ते" पृथिवी कलाऽन्तरिक्षं कला द्यौः कला समद्रः कला एष वै सौम्य! चतुष्फलः पादो ब्रह्मणोऽनन्तवान्नाम–स्मिन् लोके भवति अनन्तवतो ह लोकञ्जयति य एतमेवं विद्वांश्चतुष्फलं पादं ब्रह्मणेनन्तवानित्युपास्ते" "अग्निः कला सूर्यः कला चन्द्रः कला विद्युत्कला एष वै सौम्य! चतुष्फलः पादो ब्रह्मणो जयातिष्मान्नाम स य एतमेवं विद्वांश्चतुष्फल पादं ब्रह्मणों ज्योतिष्मानित्युपास्ते ज्योतिष्मानस्मिन् लोके भवति ज्योतिष्मतो ह लोकञ्जयति य एतमेवं विद्वाश्चतुष्फलं पादं बह्मणों ज्योतिष्मान्नाम स य ऐतमवं विद्वांश्चतुष्फलं पादं ब्रह्मणों ज्योतिष्मानित्युपास्ते ज्योतिष्मानस्मिन् लोके भवति ज्योतिष्मतो ह लोकञ्जयति य एतमेवं विद्वांश्चतुष्फलं पादं ब्रह्मणों ज्योतिष्मानित्युपास्ते।" इत्युपनिषद्

भारतीय चित्रकला का स्पष्ट उद्देश्य अर्थ, काम और मोक्ष है। वेदों, ग्रन्थों और उपनिषदों में ललितकलाओं और शिल्पकला का सुन्दर वर्णन किया है।

भारतीय चित्रकला और धार्मिक और आध्यात्मिक प्रवृत्ति

भारतीय परम्परा में जीवन के किसी भी क्षेत्र में कुरुपता को स्थान नहीं दिया गया है, क्योंकि भारतीय सभ्यता और संस्कृति राग और रस से परिपूर्ण है। भारतीय संस्कृति में कला का लक्ष्य कला नही वरन परम तत्व की प्राप्ति ही कला है। भारतीय कलकारों व कवियों की यह मान्यता है कि जिसका संकेत परमत्व की ओर है, वही कला है। प्राचीन काल में समग्र जीवन धर्म से प्रभावित था। उपनिषदों में शिल्प को आत्मा का संस्कार करने वाला माना गया है। धर्म, अर्थ, काम आदि पुरूषार्थ के क्षेत्र में कला मोक्ष के समान है। कला सदैव ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्रेरणादायिनी रही है, जिसमें सत्य का दर्शन होता है। इस प्रकार भारतीय चित्रकला को चित्र सूत्रकार ने जीवन के चारों पुरूषार्थ की प्राप्ति में सहायक माना है। भारतीय चित्रकला में सत्यम्, शिवम्,

सुन्दरम का रूप दृष्टिगोचर होता है जो कि किसी भी देश व राष्ट्र की कला में दिखायी नहीं देता है। भारतीय चित्रकला का श्रेष्ठ गुण यही है कि उसका आलम्बन आध्यात्मिक, दार्शनिक, धार्मिक, तात्विक तथा सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम आदि मिश्रित रूप रहा है। कला परम ज्योतिर्मयी है, कला का उदय परमात्मा द्वारा हुआ "हरिण्यगर्भः समवर्तताग्रे"।

परमात्मा ही आदि कलाकार है, उसकी कला में सत्यम, शिवम्, और सुन्दरम् के दर्शन होते है, क्योंकि उसके अलावा जगत में दूसरा चेष्टा करने वाला भारतीय चित्रकला का जन–स्वरुप पवित्र और धार्मिक है, वहीं भारतीय चित्रकार का स्वरूप भी पवित्र और धार्मिक है। उसकी तुलना एक साधू अथवा योगी से की जा सकती है जो चित्र बनाने से पहले अपने इष्टदेव का पूजन करता है और निश्चित धार्मिक विधान के अधीन चित्र का सृजन करता है। इस प्रकार उसका यह कार्य पवित्र और धार्मिक होता है। धर्म जीवन का लक्ष्य निर्धारित करता है तथा भविष्य का सुखद अन्त निश्चित करता है। चित्रकला के द्वारा ही संम्भव थी। इस प्रकार विभिन्न धार्मिक अवसरों, उत्सवों और संस्कारों के लिये कला ने धर्म को ईश्वरीय रुप मूलरुप से प्रदान किया, जैसा कि लोक–चित्रण में पाया जाता है। दूसरी ओर धार्मिक आस्था से सम्बन्धित विषयों को स्थायित्व प्रदानन करने में भी कला ने बहुत बड़ा योगदान किया। अजन्ता के चित्र बौद्धधर्म के दर्शन का ही अंकन है। इसी प्रकार रामायण, महाभारत, गीतगोविन्द आदि के अमुक विषय या प्रसंग चित्रकला के द्वारा मध्यकाल में उपलब्ध कराये गये। कला के विकास में धर्म ने सहायता भी की है। धर्म ने अपनी आत्मा, वैभव, शक्ति और स्फूर्ति, कला को प्रदान किये, कला ने विनिमय में इसे सौन्दर्य और रस का वरदान दिया। धर्म ने सौन्दर्य को गौरव दिया और सौन्दर्य ने धर्म को प्रबल आकर्षण। स्वयंम्बरा कला ने विज्ञान को वरण किया और विज्ञान ने अपनी सम्पूर्ण विभूति इसे सौंप दी। विज्ञान ने चाहा कि कला यथार्थ और प्रमाण के बन्धनों में बधी रहे। परन्तु हुआ यह कि विज्ञान स्वयं अपने विकास के क्रम से यथार्थ के सीमान्त तक पहुच गया, और प्रमाणो द्वारा ऐसे रहस्य से जा टकराया जिसकी सिद्धि इनके द्वारा संभव नहीं। कला विज्ञान के द्वारा निर्धारित यथार्थ की सीमाओं में बहुत काल तक विचरी, किन्तु जब विज्ञान स्वयं रहस्य के धूमावृत देश में पहुंच गया तब तो कला को नूतन स्फूर्ति मिली। जिस क्षण विज्ञान ने संभावनाओं को स्वीकार किया, कलाकार की कल्पना ने भी उड़ान के लिये पंखे खोल दीं। ज्ञान के अभूतपूर्व विस्तार ने कल्पना के लिये अनन्त अन्तराल खोल दिये और कला–सृजन के लिये असंख्य अवसर। भारतीय चित्रकला की परम्परा धार्मिक एवं आध्यात्मि रही है। परम्परा से हमारा तात्पर्य उस धारणा से है जो क बार समाज के द्वारा अपनाये जाने के बाद लगातार अपनायी जाने वाली प्रक्रिया बन जाती है और जो संस्कृति के एक निश्चित अंग के रूप में दिखलाई पड़ती है। सामाजिक अवधारणा में परम्परा को जन्म, मनुष्य अपने विभिन्न अनुभवों को स्थायी रूप देने के लिये दिया करता है। कला संस्कृति का एक अंग है और संस्कृति की अभिव्यति में परम्परा उसका एक निश्चित स्वरुप मानी गयी है। परम्परा का विकास सामाजिक दर्शन और मूल्यों के सहारे होता है। प्रत्येक कला में अनुकृति के सृजन के महत्वपूर्ण सिद्धान्तों में से कुछ निश्चित परम्परागत तत्व अवश्य पाये जाते हैं। इन परम्परागत तत्वों के आधार पर ही कलाकृति को समझना संभव होता है और जिनके प्रभाव में कलाकृति को समझना बहुत ही कठिन हो जाता है।

भारतीय चित्रकला की परम्परा में धर्म, दर्शन और आध्यात्म उसके महत्वपूर्ण आधार है। चित्रकला में, चित्रण विद्या का जब भी प्रसंग आया है, उसे धार्मिक और पवित्र कार्य बतलाया गया है। परम्परावादी चित्रकला का यह स्वरुप प्रारम्भ से अन्त तक दिखलाई पड़ता है। इस प्रसंग में अनेक ऋषियों और दार्शनिको ने स्पष्ट संकेत दिये है कि चित्रकर्म एक धर्मकर्म है। साधारणतः जन–सामान्य की भी यही धारणा है कि चित्रकला का जन्म और विकास भारतवर्ष में, धार्मिक भावना से ही हुआ है। डॉ. राधाकृष्ण मुखर्जी ने तो स्पश्टतः यह बात मानी है कि चित्रकला का प्रमुख उद्देश्य धर्म की सेवा करना है। मार्कण्ड़ ऋषि ने चित्रसूत्र में स्पष्ट किया है कि चित्रकारी में ऐसा प्रयत्न किया जाना चाहिये कि जिससे सबका चित्त उसके प्रति आकृष्ट हो ।

भारतीय चित्रकला की परम्परा धर्म प्रधान रही है। धारणा यह है कि भारतीय चित्रकला का जन्म धार्मिक सेवा के उद्देश्य से ही हुआ है। धार्मिक भावना ने चित्रकला को विषय–वस्तु प्रदान की है। धार्मिक

भावना ने ही चित्रण में नैतिकता के महत्व को स्थापित किया। चित्रकला में धार्मिक भावना को महत्व देते हुये प्रो. आर के. मुकर्जी ने माना है कि चित्रकला और धर्म में इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि यह सिद्ध करना कठिन है कि इन दोनों में पहले किसने जन्म लिया। भारतीय चित्रकला के प्राचीन ग्रन्थों में चित्रकला के कार्य को धार्मिक आस्था के उद्देश्य से निश्चित किया गया है और चित्रकार को धार्मिक विचारों से ग्रस्त माना है। चित्रसूत्र में चित्रकार को धार्मिक आचरण अपनाने के निर्देश भी दिये गये है। इस प्रकार यह तथ्य प्रमाणित हो जाता है कि भारतीय चित्रकला की परम्परा का धर्म एक महत्वपूर्ण तत्व है। कला और धर्म परस्पर सम्बन्धित हैं। कलाओं को धर्म ने सर्वाधिक एवं सशक्त प्रेरण दी है। धार्मिक अमूर्त विषयों के अंकन से कला का सौन्दर्य बढ़ा है। रहस्यवादी कविता इस प्रकार की सर्वोत्तम उपलब्धि है। कलओं ने धर्म की अनेक रूपों में सेवा की है। कोई भी कला ऐसी नही है, जिसका धर्म में उपयोग न किया गया हो। कला के कारण धार्मिक विचारों को विविधता, प्रभावशीलता, आकर्षण एवं सौन्दर्य प्राप्त हुआ है। धार्मिक व्यक्ति जब सौन्दर्य का दर्शन करता है तो वह उसमे ईश्वर के ही दर्शन होते है। कला का आध्यात्मिक पक्ष सत्यम्–शिवम्–सुन्दरम् तथा अर्थ, काम और मोक्ष के जीवन के संदर्भ में परिलक्षित रहात है। कला ने धर्म की सहायता की है। सुन्दर–असुन्दर देवी–देवताओं की स्वरूप–कल्पना कला के द्वारा ही संभव हुई है। धर्म के रहस्यों और गम्भीर बिन्दुओं की जब भाषा स्पष्ट करने में असफल रही है, तब कला–कृतियों का सहयोग लिया गया।

निष्कर्ष

मानव एक सामाजिक प्राणी है सामाजिक पर्यावरण के अनुकूल ही उसका व्यवहार विकसित होता है। जन्म से ही उसमें सामाजिक तत्व निश्चित रुप से पाये जाते है। शैशवास्था से ही वह अपने परिवार के सदस्यों के सम्पर्क में रहकर सामाजिक नियमों का अभ्यस्त हो जाता है। बाल्यावस्था में वह अन्य समवयस्क बालकों के साथ क्रीडाकलाप में आनन्द प्राप्त करता है। तत्पश्चात यौवनावस्था में वह कुटुम्ब तथा समाज के अन्य व्यक्तियों के संसर्ग में आता है। इस प्रकार आरम्भ से ही व्यक्ति के हृदय पटल पर प्रत्येक स्थिति में अन्य व्यक्तियों तथा सामूहिक रुप में समाज का संसर्गजन्य प्रभाव हर क्षण पडता रहता है। इन सामाजिक परिस्थतियों का उसके मन पर सीधा प्रभाव पड़ता है। उसका प्रत्येक कार्य समाज की सीमाओं से होता है। समाज की संस्कृति का एक अंग कला है जिसको समाज अपने सीने मे सदैव बनाये रहता है और कला ने भी समाज को कभी नहीं छोड़ा है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. चतुर्वेदी गिरधर शर्माः 'वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति' पटना 1972।
2. चन्देल उमापतिराय : 'पौराणिक आख्यानों का विकासात्मक अध्ययन', दिल्ली 1975।
3. चतुर्वेदी गिरधर शर्मा : वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति।
4. जोशी महादेव शास्त्री : 'हमारी संस्कृति के प्रतीक' 1980।
5. डॉ. जोशी नी.पु. : 'प्राचीन भारतीय मूर्ति विज्ञान' पटना 1977।
6. डॉ. यदुवंशीः 'शैवमत' पटना, 1955।
7. द्विवेदी हजारीप्रसादः 'प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद', 1963।
8. प्रसाद ईश्वरी शैलेन्द्र शर्माः 'प्राचीन भारतीय संस्कृति, कला, राजनीति, धर्म, दर्शन, इलाहाबाद 1976।
9. भारतीय जितेन्द्रचन्द्र : 'शिव पुराण में शैवदर्शन'।
10. भण्डारकर रा. गो. :'वैष्णव, शैव और अन्य धार्मिक मत' वाराणसी, 1967।
11. मेहता एन.सी.ः 'भारतीय चित्रकला', इलाहाबाद 1933।
12. राजदान अवतार कृष्ण : 'कश्मीरी ललित कलाएं उद्भव और विकास', 1976।
13. वर्मा सा. वि. लाल : 'भारत में प्रतीक (मूर्ति) पूजा का आरम्भ और विकास' पटना 1974।
14. सर्वदानन्द स्वामी : 'वेदसार' (मूलमंत्र पाठ) होशियारपुर।

❖◆❖